International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 73-73

वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी के तत्पुरूष समास में स्वर प्रक्रिया

नवीन
शोधछात्रा, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, गांव खानपुरा कलां, जिला झज्जर, हरियाणा, भारत

प्रस्तावना

समस्तपदों की दृष्टि से संस्कृत के प्राचीन वैयाकरण समास के चार भेद मानते है– 1. तत्पुरूष 2. बहुब्रीहि 3. द्वन्द्व 4. अव्ययीभाव। समस्तपदों का प्रयोग वेद में स्वरयुक्त ही मिलता है। अतः पाणिनि ने वैदिक समस्तपदों के स्वरविषयक विभिन्न नियमों का प्रतिपादन किया है। सर्वप्रथम उन्होनें समासगत स्वर का सामान्य नियम प्रस्तुत किया है, फिर उसके अपवादभूत नियमों का प्रतिपादन किया है। समास–स्वर सम्बन्धी सामान्य नियम अधोलिखित है–

समासस्य[1]–

प्रकृत सूत्र समस्त पद में स्वर विधायक सामान्य सूत्र है। इस सूत्र में 'अन्तः'[2] तथा 'उदात्तः[3] पदों की अनुवृत्ति है। – इस सूत्र का अर्थ है– समास का अन्तिम अक्षर अर्थात् व्यंजन–सहित स्वर अथवा अनुस्वार सहित स्वर अथवा शुद्ध अकारादि स्वर उदात्त[4] होता है। समास में प्रयुक्त भिन्न–भिन्न पदों के पृथक–पृथक स्वर होते हैं। समासोपरान्त समस्त पद में प्रकृत सूत्र द्वारा एक ही स्वर अन्तोदात्तत्व का विधान किया गया है। सिद्धान्तकौमुदी में प्रकृत सूत्र के उदाहरण के रूप में स्वरांकनसहित 'यज्ञश्रियम्' पठित है। द्वितीयान्त समस्त पद का मूल शब्द 'यज्ञ श्री' है इसमें षष्ठी–तत्पुरूष–समास है। इस पद का विग्रह है– यज्ञस्य श्रीः। उक्त समस्त पद में प्रकृत सूत्रानुसार अन्तिम अक्षर 'श्री' का ईकार उदात्त है। 'श्री' के ईकार को छोड़कर शेष यकार एवं ज्ञकार का अकार अनुदात्त है।[5] 'यज्ञश्री' पद के द्वितीया, एक वचन में 'अम्' प्रत्यय जोड़ने पर 'श्री' के ईकार को इयङ् (इय्) आदेश होता है। आन्तरतम्य से उदात्त ईकार के स्थान पर आदेशभूत 'इयङ्' का इकार भी उदात्त[6] है। उसके परवर्ती 'अम्' प्रत्यय का अकार, जो कि यकारस्थ है, अनुदात्त था, उदात्त से परवर्ती होने के कारण स्वरित हो गया है।

स्वरसिद्धान्तचन्द्रिका में प्रकृत सूत्र के उदाहरण 'वैश्वदेवाग्निमारूते[7]' तथा 'यजमानभागम्' पद स्वरांकन सहित पठित है। ' वैश्वदेवाग्निमारूते' समस्तपद में द्वन्द्व–समास है। इस पद का विग्रह है– वैश्वदेवश्च अग्निमारूतश्च। 'वैश्वदेव' तथा 'अग्निमारूत' दोनों पद 'अण्' प्रत्ययान्त होने के कारण अन्तोदात्त है।[8] परन्तु समासोपरान्त प्रकृतसूत्रानुसार अन्तिम अक्षर 'ते' का एकार उदात्त रहता है। शेष अक्षर अनुदात्त रहते हैं।

'यजमानभागम्' समस्त पद में षष्ठी–तत्पुरूष समास है। इस पद का विग्रह है– 'यजमानस्य भागम्' पूर्वपद 'यजमान' की निष्पत्ति यज्[9] से 'शानच्' प्रत्यय लगकर हुई है। नित्–प्रत्ययान्त होने के कारण 'यजमान' शब्द आद्युदात्त है। उत्तरपद 'भाग' की निष्पत्ति भज् धातु[11] से 'घञ्'[12] प्रत्यय लगकर हुई है, अतः यह पद अन्तोदात्त है। किंतु समासोपरान्त प्रकृत सूत्रानुसार अंतिम अक्षर गकारस्थ अकार का स्वर उदात्त रहता है, शेष सभी अक्षर अनुदात्त रहते है।

प्रकृत सूत्र के अनेक अपवाद मिलते है। समास में कही उदात्त स्वर पूर्वपद पर रहता है और कहीं उत्तर पद पर रहता है। कभी–कभी उदात्त स्वर पूर्वपर अथवा उत्तरपद के प्रकृतिस्वर (यथापूर्व स्वर) के रूप में रहता है, तो कभी–कभी उसका स्थान परिवर्तित भी हो जाता है। आचार्य पाणिनी ने अष्टाध्यायी के छठे अध्याय के सम्पूर्ण द्वितीय पाद में 199 सूत्रों द्वारा समास–स्वरों का विधान किया है जिन्हे प्रकृत सूत्र 'समासस्य' सूत्र के अपवाद सूत्र माना जा सकता है। इन समस्त अपवाद सूत्रों को प्रमुख समास–भेदों के आधार पर चार अध्यायों में वर्गीकृत किया गया है। वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी के आधार पर तत्पुरूष समास के उदाहरण में स्वर–प्रक्रिया का विवेचन प्रस्तुत है।

जिस समास में उत्तर पद के अर्थ की प्रधानता रहे, वह 'तत्पुरूष–समास' कहलाता है[13] 'तत्पुरूष' शब्द का विग्रह है– 'तस्य पुरूषः'। समास के इस उदाहरण को ही इस समास की संज्ञा के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यद्यपि वैयाकरणों ने तत्पुरूष समास का क्षेत्र व्यापक माना है तथापि इसे मुख्यतः दों भेदों में विभक्त किया जा सकता है–प्रथमतः वह तत्पुरूषसमास जिसका पूर्वपद द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी और सप्तमी विभक्ति में से किसी एक विभक्ति के अर्थ का वाचक हो। यथा– 'कृष्णश्रितः, 'हरित्रातः' इत्यादि। दूसरा वह तत्पुरूष–समास जिसका पूर्वपद उत्तरपद का विशेषण अथवा क्रिया विशेषण हो। यथा– 'नीलोत्पलम्', 'कृष्णसर्पः, 'स्तोकान्मुक्तः' इत्यादि। तत्पुरूषसमाज सामान्यतः अन्तोदात्त होता है। यथा–'राजपुरूषः'[14] पद अन्तोदात्त है। परन्तु तत्पुरूषसमास में कभी–कभी पूर्व पद अथवा उत्तर पद का प्रकृति स्वर (यथापूर्व स्वर) विद्यमान रहता है। तद्यथा– 'तुल्यश्वेतः' समस्त पद में पूर्व पद (तुल्य) का प्रकृति स्वर (यथा पूर्व आद्युदात्त स्वर) विद्यमान है।

पूर्वपद प्रकृति स्वर

पूर्व पद प्रकृति स्वर का अभिप्राय है– समस्तपद के पूर्व पद में विद्यमान उदात्त अथवा स्वरित स्वर का प्रकृतिभाव (अर्थात् अपरिवर्तित रूप) से रहना।[15] तत्पुरूष समास में पूर्व पद प्रकृति स्वर विधायक सूत्र निम्नलिखित है–

'तत्पुरूषे तुल्यार्थतृतीयासप्तम्युपमानाव्ययद्वितीयाकृत्याः'

प्रकृतसूत्र 'समासस्य' सूत्र का अपवाद है। इस सूत्र में 'प्रकृत्या' तथा 'पूर्वपदम्' पदों की अनुवृत्ति है। इस सूत्र का अर्थ है– तत्पुरूष समास में 'तुल्य' अर्थ वाले, तृतीयान्त, सप्तम्यन्त, उपमानवाची, अव्यय, द्वितीयान्त तथा कृत्य प्रत्ययान्त पद यदि पूर्व पद के रूप में विद्यमान हो तो उनका (पूर्व पद का) प्रकृति स्वर समस्त में विद्यमान रहता है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. अष्टाध्यायी, 6.1.233
2. तदेव, 6.1.220 : अन्तोऽवत्याः
3. तदेव, 6.1.159 : कृर्षात्वतो ध्त्रोऽन्त उदान्तः।
4. ऋक्तप्रातिशाख्य, 18.32 : सव्यंजनः, सानुस्वारः शुद्धो वाऽपि स्वरोऽक्षम्।
5. अष्टा०, 6.1.158 : अनुदात्तं पदमेकवर्जम्।
6. लघुशब्देन्दुशेखर – (सि०कौ०, सू सं० 3734)
7. सू०सं० 88
8. स्व० सि० च०, सू० सं० 88 : वैश्वदेवाग्निमारूतशब्दौ अणन्तो अन्तोदात्तौ।
9. धातु पाठ, 1002 : यजदेव पूजा संगतिकरणदानेषु।
10. अष्टा० , 3.2.128 : पूङयजोः शानच्।
11. धा०पा०, 998 : भज सेवायाम्।
12. अष्टा०, 3.3.18 : भावे।
13. सि०कौ०, सर्वसमासशेषप्रकरणः उत्तरपदार्थ प्रधानस्तत्पुरूषः।
14. स्वर प्रक्रिया, सू० सं० 257
15. ल०श०शे० (सि०कौ०,सू०सं०, 3735)
16. अष्टा०, 6.2.2